IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 1, Issue 1 (Jul.-Aug. 2012) 94-99
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

पं. हीरालाल शास्त्री का कृतित्व : कवि के रूप में

रंजीता जाना
शोधार्थी
इतिहास विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

लेखक और वक्ता के अतिरिक्त शास्त्री जी के व्यक्तित्व का एक स्वरूप कवि का भी है। अपने विद्यार्थीकाल से ही उन्होंने हिन्दी राजस्थानी और संस्कृत के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा तक में रचनाएँ लिखनी प्रारंभ कर दी थी। महज 17 वर्ष की आयु में किसी सम्मानित अतिथि द्वारा दी गई समस्या नकटे न कटे' की पूर्ति में उनका यह धनाक्षरी छंद दृष्टव्य है।

''भट भीड घटा घनघोर घटा, तंह बिज्जुघटा सम खडग छंटा।
रणमारू बजा कडका धन ज्यों झट जूझ पडे भटसंग फटा
रणशुर डटे फटके झपटे रणभीरू हटे सटके सिमटे।
अस देश के हेतु समाज के काज असंख्य कटे नकटे न कटे।।

यहाँ छंद में आनुाप्रांसगिक आलंकारिक छटा तो बिखरी ही है, युवा शास्त्री जी की देश और समाज हित के लक्ष्य के लिए त्याग बलिदान की श्लाघनीय विचारधारा के भी दर्शन होते है। शास्त्री जी अंग्रेजी में भी छंद रच लिया करते थे।

This is the face I loved So dear

There is the heart that felt for me

That lovely face my only cheer

The charm that gave me ever glee

The silling face, the meeing eye

Were more to me that I can say

There was a link, a knot a tie

That bound us faster day by day

शास्त्री जी का संवेदनशील कवि दुःख की आँच पाकर ही भाव द्रवित हुआ है ये दुःख उन्हे पारिवारिक धरातल पर कभी पत्नी वियोग के रूप में मिला तो कभी अपने होनहार लाडली पुत्री शांता बाई के अकाल ही कालकल्वित हो जाने पर पितृ हृदय में अपूरणीय करूणा जमा गया है। अपनी प्रिय पुत्री के दारूण निधन से लगा आघात राजस्थान की धरती की ठेठ मिठास पुतित शब्दावली में फूट पड़ा–

"एक म्हांको फूल प्यारो, अधखिल्यो कुम्मला गयो।

सोग बीत्यो हरस छायो,फूल बाग लगा गयो।।।

राजस्थान के तेजस्वी कवियों में पं. हीरालाल शास्त्री का महत्वपूर्ण स्थान है। इन्होंने ढूंढ़ाडी राजस्थानी में व्यापक साहित्य गीतों का सृजन किया। इनकी रचनाओं में हमे राजनैतिक व सामाजिक जागृति के संदेश के साथ समाज में व्याप्त विभिन्न कुरीतियों को दूर करने की स्पष्ट झलक दिखाई देती है। 1928 में जीवन कुटीर के माध्यम से शास्त्री जी ने जब रचनात्मक कार्य का बीड़ा उठाया तो विभिन्न वर्गो के संपर्क में आए तब उनसे जुडी समस्याओं को जाना तथा एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में शास्त्री जी ने गाँव में व्याप्त कुरीतियों के विरूद्ध आवाज बुलंद की तथा पर्दा प्रथा, जाति प्रथा, नुकता प्रथा आदि के विरूद्ध अपने गीतों तथा ख्यालों द्वारा जनजागरण करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। जैसे नुकता की कुप्रथा को उन्होने गीतबद्ध किया।

नुकता का पाप

(नुकता का खण्डन)

जीवन कुटी की कैण सुणों थे, नुकतो पाप घणो जबरो।।1।।

घर मे मोत हुई देखो, माच्यो रोज घणो जबरो ।।2।।
मरी लाश पर बैठ र जीमो, समझो पाप घणो जबरो।।3।।
दुनिया जिमै नांव मरचा को, ऊँलो ख्याल घणो जबरो।।4।।
जग जिमी लालाम करावै, होवै नांव घणो जबरो ।।5।।
ब्यालू साटे लुटयो टापरी, स्मझयो काम घणो जबरो।।6।।

इसी प्रकार घूंघटो गीत में पर्दा प्रथा का खण्डन किया है–

घूँघटो (पडदा को खण्डन)

थे तो बार उघाडो सारो आफत बारो घूघंट।
लाग्यो बड़ो यो पाप, अब तो दूर हटावो आप।
संधरे मिनख जमारो प्यारो, बार उधारो घूघंटो ।।1।।

सैंदा सै तो पड़दा करणो, पैला देख नेक नहिं डरणो।
देखो ऊंली चाल चली या बार उधारो घूघंटो ।।2।।

मूंडो घूघंट मॉय लुखावो, गैलै चलतां लोग लुभावो।
अब तो निरभै होर रहो थे बार, घूघंटो।।3।।

घूघंट में क्यो पाप छिपाऔ, पाप नही तो क्यो घबराओं।
छोड़ो गंदो भाव विसय को बार उधारो घूघंटो।।4।।

डील लुखायॉ सत नहिं रेणो, मन का बल सैं ही सतरैणो।
जूझों वीर भोम की नार, बार उधारो घूघंटो।।5।।

बेमारी थें यों ही भुगतो, पड़दा से कुछ ज्यादा भुगतो।
आधी चंगी बार बणों थे, बार उधारो घूघंटो ।।6।।

शास्त्री जी ने जात के भंवर जाल पर करारा व्यंग करते हुए 'भोला केश्या नामक गीत की रचना की।

(जात का भंवर जाल)

भोला रे भोला प्यारा जाति गंगा नांच रै। निस्ते ही झंठी या सारी आपमा।।1।।

भोला रै भोला गंगा सूं उपकार रै। जती तो निकला कैलेखै भूतणी।।2।।

भोला रै भोला प्यारा जात भंवर की जाल रैं ई में तो फॅस जासी सो ही डूबसी।।3।।

भोला रै भोला प्यारा '' हम बड़े'' की बात है।जती को अतरो ही मतलब जान लै।।4।।

भोला रै भोला प्यारा निस्तै मन में जाण रै। जती का टूटया सूँ आनन्द होवसी।।5।।

भोला रै भोला प्यारा जाती का ये लोग रै। लाडू रै खाबा का पूरा राछ छे।।6।।

इनके अतिरिक्त शास्त्री जी ने नारी जैसे महत्वपूर्ण वर्ग को जागृत करने के लिए कई गीतों की रचना की इस सन्र्दभ में नारी मरदाणी उनके द्वारा लिखा गया–

नारी–मरदाणी (पालती की लुगाई का दुःख की फोटू)

नारी मरदाणी! तू आबरूकी अमर सैनाणी! नारी मरदाणी।
खाली होगा टापरो सो देखलै ए मरदाणी ।
टांख्यॉ खोलकर झांक, तूतो ईकै कानी झांक,
टब तो घर के कानी झांक नारी मरदाणी।।1।।

छोरी छोरी बावड़ रोटी मांगै मरदाणी।
भूखा रोवै–मरता नारा, थारा कालजा का टूक।
थारा हिवड़ा का ये टूक नारी मरदाणी।।2।।

सी सरदी में थर धूजै थारा टाबर मरदाणी।
तन पर लत्तो तन पर लत्तो नाख, अब यो यॉका तन नै ढ़ांक,
याकी सी सरदी तू डॉट नारी मरदाणी।।3।।

लीरका लीरा घाघरियों तू पैरयॉ डोले मरदाणी
लांजा मरगी लांजा मरगीलाज, थारा नागा तन नै देख,
थारो डील उघाडद्यो देख नारी मरदाणी।।4।।

शास्त्री जी ने जनता को जागृत करने व अपने अधिकारों को प्राप्त करने तथा परतंत्रता की बेडियों से मुक्त होने पर कई छंदो की रचनाऐं की।

'' तन शक्ति लुटी, मन शक्ति लुटी ,धन शक्ति लुटी, जन शक्ति लुटी
सब धर्म लुटा, बस कर्म लुटा ,सब मान लुटा, सब शान लुटी
पहले अंग्रेंज , बुरे लगते थे ,कहते हम थे, यह लूट रहे
अब तो कहना पड़ता हमको ,हमको घर के यह लूट रहे
यह राज नहीं अपना लगता ,पर राज इसे हम मान रहे।
यह राज नहीं अपना लगता , पर राज इसे हम मान रहे
यह शासन है मरता गिरता ,कुई कानून को नहीं मान रहे
इस शासन की परवाह बिना ,हम साघटना कर लें अपनी
हर गाँव सभा मजबूत बने ,तब होय हकुमत भी अपनी
जन शक्ति भरे जन क्रांति करे ,इस शासन को उलटे ना करें
निज के भुज के बल से उपजें ,उस ही धन का उपयोग करें

कहूँ कांगन की नहि आदत हो ,मिल जोर लगा अधिकार करे
जन सेवक वे नर बनते है ,जब गर्ज उठे 'न करे तु मरे''

शब्द शिल्प के रूप में काव्य कला का अभ्यास करते करते शास्त्री जी का काव्य बोध और कवि संस्कार क्रमशः विकसित और परिमार्जित होता गया। अतः कविता में समुचित शब्द योजना को काव्य का प्राण मानने के आचार्य क्षेमेन्द्र के सिद्धान्त का भी उन पर प्रभाव था। शास्त्री जी ने अपने व्यक्तिगत दुःख के रिक्त अभाव घट को जन–भावनाओं के अथाह ओर अपार जलाधि में डुबो दिया। जीवन कुटीर के कार्य करते समय गाँवों में व्याप्त अशिक्षा शोषण, गरीबी, मृत्युभोज, अस्पृश्यता आदि सामाजिक दोषों से शास्त्री जी स्वयं रूबरू हुए और जनित संवेदना ने भी उनके कवि हृदय को कचोटा जिसका परिणाम, लोकमंगल की कामना से लिखे गए जीवन कुटीर के गीत व अन्य रचनाऐं है। जीवन कुटीर के कार्यकर्त्ता नित्य नियम पूर्वक सुबह शाम सामूहिक प्रार्थना गाया करते थे। इन दोनो पद्यमय प्रार्थनाओं का सृजन शास्त्री जी ने ही किया। संध्याकालीन प्रार्थना प्रलय प्रतीक्षा तो काफी प्रसिद्ध हुई। जन संघर्षो की लहरों पर डूबते–उतरते, नये जीवन क्षितिजो के अभिलाषी इस अभिनव साहसी नाविक की हर संध्या प्रलय की प्रतीक्षा में गीत बनकर ढलने लगी।

राग रहित हो जन सेवा की, शुभ अभिलाषा नमो नमो,
निर्भयता युत सत्य–शांतिमय, कर्म चिकीर्षा नमो नमो।।
व्यक्तिगत अरूपारिवारिकी, स्थिति से उपर उठी हुई।
वीर हृदय को जो सुखदेती, राष्ट्र निनीषा नमो नमो।।
अंधकार के बादल नभ में, मंडराते जब घुटे हुए।
मृत्यु नृत्य के बीच भटों की, जीवन आशा नमो नमो।।
बाड बेल को जब खाती हो, आशा का आधार कहा।
ऐसी स्थिति में धर्म स्थापना, की आशंसा नमो नमो।।
सत्ता का मद, धन की रचना, साम्प्रदायिकी खीचातान।
निर्बल जन अवहेलन करना, उन यजुगुत्सा नमो नमो।।
निज दुर्बलता, घर की दुविधा, जनता का अज्ञान महा।
कार्य कठिनता, साधनलघुता, कठिन परीक्षा नमो नमो।।
भूख, प्यास अरू सर्दी गर्मी वर्षा आंधी सभी सहे।
और सहेजित भ्रमण जागरण, कष्ट पिपासा नमो नमो।।
वैभव सुख चाह नही हो, मान बड़ाई चेहे नही।
जीवन की परवाह नही हो, प्रबल मनीषा नमो नमो।।
मौसम के जिन चिन्हो को भी, होना था अनुकूल जहां।
नैया की गतिरोक रहे वे, जलधितितीषा नमो नमो।।
तथाकतिथ सब प्रबल, शक्तिया, हो विपक्ष में जुटी हुई।
जगदीश्वर की दया मया से, जगत जिगीषा नमो नमो।।
निर्धनता, अज्ञान, भीति ने जीवन का रस छीन लिया।
मरणानन्तर जीवन दायक, प्रलय–प्रतीक्षा नमो नमो।।

कवि सुरदास ने भक्ति की भूमि पर जिस कवि सत्य को 'इकनदियां इस नार कहावै, मैं लोही नीर भरयो, जब सब मिलकर एक वरण भये सुरसरि नाम परयो'– इन शब्दों में अनुभव किया था इसी को शास्त्री जी ने कर्म की भूमि पर अनुभव करते हुए इन शब्दों में मूर्त रूप दिया।

जिनगाणी को झरनो हरदम झर–झर बहते जावै छै।
समंझे ज्यांने बात इस की गुपचुप कहते जावै छै।
बालपनै नान्हों सो झरणो, कल कल करतो जावै छै।
फेर जुबानी छावे जद वो जोबन मद में नाचे छै।

जिसने जीव के इस निर्झर– सत्य को समझ लिया वह फिर किसी एक ठोर ठहरता नहीं है। बल्कि शास्त्री जी का कवि कभी कल कल बहते झरने में जिन्दगी का प्रतिरूप देखता है तो कभी फक्कड़ भाव से अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अलख जगाता निकल पड़ता है और फक्क्ड़ो के बेताज बादशाह कबीर के शब्दों में चुनौती देता हुआ इस जग से कहता है कि 'कबिरा खड़ा बाजार में लिए लुकाठी हाथ, जो फूंके घर आपनो चले हमारे साथ इस तरूण साधक ने भी फक्कड़ भाव की महिमा को अच्छी तरह समझ लिया था। जो कवि रूप में इस प्रकार प्रकट हुआ।

जागे जागे फक्कड़ भाव, अजी अब जाग्यां सरसी जी
सुख छोड़ भला घर भी छोड़े, छोड़े घर का कार
मान बढ़ाई बिन छोड़या सूं फक्कड़पन बेकार।।

शास्त्री जी ने न केवल लोकभाषा और स्थानीय बोली का ही प्रयोग अपनी कविताओं में किया बल्कि स्थानीय मुहावरों और सुक्तियों को भी बड़ी खूबी से अपनी रचनाओं में पिरोया है । एक बानगी दृष्टव्य है–

अण बोल्या को खाखलो भी तिना विक्यौ रै जाय छै
बौले जी का बूंबला का बोल बोला है।
न रौवे जो टाबर नै तो मा भी बोबे दे नहीं
रूस बालां टाबरां का बोल बाला छै।''

शास्त्री जी ने अपने गीतो में राजनीति और सामाजिक चेतना के स्वर दिये है– वही विरोचित साहस और कर्मठता के आधार पर अदृश्य नियति को भी चुनौती देने से वे नही चूके है–

'' मुश्किलों की क्या कहें, हर रोज वे आती रहे
सामना उनका करें हर रोज वे जाती रहे
टक्कर हमारी हो रही है जोर की चट्टान से
चट्टान चकनाचूर होगी, कह दिया भगवान से
हां, कह दिया भगवान से। फिर कह रहे भगवान से।''

शास्त्री जी ने अपनी रचना पंचशती में अपनी पत्नी, परिवार, कर्म क्षेत्र और अपने दायित्वों से सम्बन्धित सभी विषयों को कविता का माध्यम बनाया है। कर्तव्य कर्म में निस्संग अनाशक्ति और पारिवारिक सम्बन्धो में अत्यधिक मोह– ममता के दो विषय ध्रुवों के बीच शास्त्री जी का मन आन्दोलित होता रहा है। आशा, निराशा, संश्य समाधान, जिज्ञासा, आत्मविश्लेषण, व्यामोह, अनुत्साह और आस्था की समस्त मनस्थितियों को उन्होंने बिना किसी लाग लपेट या कांट छांट के अपनी रचना पंचशती में संकलित कर दिया है। कभी वे आत्मविश्लेषण करते हुए स्वीकार करते है कि–

स्वभाव काबू रखना पडेगा, आवेश को भी तजना पड़ेगा,
कर्त्तव्य पूरा करना पडेगा, होना अनासक्त मुझको पडेगा।।

शास्त्री जी ने जीवन कुटीर की स्थापना कार्य के साथ उनका चिन्तन क्रान्ति के किसी दूसरे मार्ग को खोजने में भी चलने लगा था। उन्होने उस समय क्रान्ति का जो सपना देखा था। वह इस प्रकार से था–

'' सपनो आयो एक घणो जबरा रै, सपनो आयो।
टडका छा सो निमला हो गया,
निमला राज घणे जबरो से सपनो आयो

म्हैला की तो टपरी बन गयी टपर महैल घणो
जबरो रै, सपनो आयो।।''

शास्त्री जी ने जब जयपुर राज्य में प्रजामंडल की स्थापना की तब भी वे अपने कवि भावों को प्रकट करने से नहीं रोक सके ओर इस उवसर पर भी शास्त्री जी ने दो रचनाओं का निर्माण कर डाला। इस रचना में प्रजामंडल को अपना अंग माना गया।

''प्रजामंडल प्रजा का यह, प्रजा मंडल हमारा है।

प्रजामंडल के है, हम तो, प्रजामंडल हमारा है।।

हमें विश्वास मण्डल का, करें हम प्यार मण्डल को

प्रजा मंडल की जय बोले, प्रजामंडल हमारा है।''

इसी प्रकार अगस्त 1939 में जयपुर राज्य प्रजा मंडल की वर्किंग कमेटी के कुछ सदस्यों के जेल में छूटकर आने के अवसर पर भी शास्त्री जी द्वारा रचित कविताओं को स्वागत गीत में गाया गया जो इस प्रकार से है–

स्वागत करें हम आपका, स्वागत पधारिये।
सेठ जी है जेल में अरू , स्वास्थ भी अच्छा नही।
दू:खे हूए लि से कहे ,स्वागत पधारिये।।
आप आये जेल से, पर जेल में हम भी तो थे
छोटे बड़े का फर्क था, स्वागत पधारिये।।
तोड़ना फाटक हमें है, इस पुराने जेल का
स्वागत करें हम आपका, स्वागत पधारिये।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि ने सीधी–सादी भाषा में ईश्वर जीवन और जगत के प्रति अपने अर्न्तमन की भावनाओं का समान रूप से चित्रण किया है।

यद्यपि शास्त्री जी का अपने सहृदय पाठको से आग्रह है कि वे किसी भी रचना में काव्यत्व की खोज न करें तथापि यह स्वीकार करना ही होगा कि अनुभूति की मौलिक निजता और अभिव्यक्ति की ईमानदारी यदि काव्य के अनिवार्य तत्व है तो हृदय के इन उद्‌गारों को भी कविता की संज्ञा से अभिहित करना होगा। परिष्कृत किन्तु कृत्रिम चमत्कृति के सुवर्ण अलंकरण की अपेक्षा अनगढ़ पर से तराशे गये शुद्ध खनिज स्वर्ण की कान्ति को किसी भी पारखी की दृष्टि अवमूल्यित करके नही आकेगा। शास्त्री जी की कविताओं में भी जीवन की सहज स्वभाविक भावनाओं का सहज स्वभाविक भाषा शैली में वर्णन है जिसमें अनुभव प्रसूत ओज, माधुर्य और प्रसाद गुणों की झलक है। अतः शास्त्री जी की कविता में कला भले ही कम हो, कविता किसी भी अंश से कम नहीं है।

इस प्रकार कहां जा सकता है कि समालोचक ने ठीक ही कहा है यदि पंडित हीरालाल शास्त्री राजनीतिज्ञ, समाज सुधारक, महिला शिक्षा और ग्राम विकास के विविध रचनात्मक कार्यो में नहीं उतरते तो वे विशुद्ध कवि के रूप में ही प्रतिष्ठित होते।

संदर्भ

1. पं.हीरालाल शास्त्री : प्रत्यक्षजीवन शास्त्र पृ. 9,265, 86–96 ,161,272,280,281 233–34
2. मदन गोपाल शर्मा : वनस्थली का वानप्रस्थी. पृ. 40,41,45,61,65,66,67,74,75
3. भगवान सहाय त्रिवेदी : राजस्थान का लौह पुरूष, पं. हीरालाल शास्त्री पृ. 59,57,60,
4. पं. हीरालाल शास्त्री : प्रत्यक्षजीवन शास्त्र, (जीवन कुटीर के गीत) पृ. 272
5. डॉ. राम पाण्डे : शोधक पत्रिका, जनआन्दोलन साहित्य, अक्टूबर 2004